"गांधीवादी शिक्षा की 21वीं सदी में प्रासंगिकता"

डॉ. पवन कुमार शर्मा *

प्रस्तावना

यों तो गांधीजी ने शिक्षा के विषय पर व्यापकता से विचार किया है। उन्होंने शिक्षा पर न केवल व्यापक विचार किया बल्कि उसका व्यवहार में क्रियान्वयन भी किया। सन् 1891 से लेकर 1948, अपनी शहादत तक उन्होंने शिक्षा के अनेक आयामों का विकास किया और उन पर गंभीरता से स्वयं भी चलने और अन्यों को भी चलने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने शिक्षा के अर्थ, उद्देश्य, दक्षिण अफ्रीका में शिक्षा के प्रयोग, गांधीजी की शिक्षा का भारत में प्रयोग, बाल शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालयीय शिक्षा पर चिन्तन, शिक्षा के सामाजिक और व्यावहारिक सरोकार तथा शिक्षक और विद्यार्थी जैसे गूढ़ विषयों पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। वैसे भी गांधीजी ने अपने सम्पूर्ण जीवन में लगभग 50,000 पृष्ठों का पाथेय हमारे सम्मुख लेखों के रूप में छोड़ा है जिसे भारत सरकार के प्रकाशन विभाग ने 100 खण्डों में प्रकाशित कर गांधी अनुयायियों और मानवता की महती सेवा की है। जिन्हें गांधी को पढ़ना और समझना है वे इन खण्डो को पढ़कर गांधी को कालक्रम और ब्योरेवार न केवल समझ सकते हैं अपितु गांधी का विश्लेषण भी कर सकते हैं। इन खण्डों में न केवल गांधी के लेखों का समायोजन किया गया है बल्कि गांधी के वे 30,000 पत्र भी सम्मिलित हैं जो अपने जीवन के 18वें वर्ष से लेकर अपनी मृत्यु तक उन्होंने किसी भी व्यक्ति को लिखे। इस प्रकार यह सम्पूर्ण वांग्ङ्मय न केवल लेखों का संग्रह है जो कि गांधी के विचारों से हमें अवगत कराता है अपितु यह गांधी के पत्रों का भी जीवन्त रूप है जो कि गांधी की सूक्ष्म–से–सूक्ष्म विषय पर पकड़ एवं जन सामान्य के साथ उनके रागात्मक व्यवहार से परिचित कराता है। गांधी की शिक्षा और उसके व्यावहारिक रूप को समझने के लिए तो कई जन्म भी कम रहेंगे किन्तु यहाँ पर हम भारत के विषय में उनकी चिन्ता जोकि स्वरोजगार एवं स्वावलम्बन को लेकर उनके मन में सदैव रहती थी, के विषय में उनका चिन्तन जोकि नई तालीम और बुनियादी शिक्षा के रूप में प्रकट हुआ है, पर ही प्रकाश डालने का प्रयास करेंगे, क्योंकि आधुनिक युग में भारत की बढ़ती जनसंख्या और बेरोजगारी की समस्या तथा वैश्वीकरण के प्रभाव के चलते स्वरोजगार और स्वावलम्बन भारत के युवकों के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। साथ ही गांधीजी के उच्च शिक्षा संबंधी विचारों पर भी विचार करना वर्तमान परिप्रेक्ष्य में समीचीन प्रतीत होता है, क्योंकि आजकल उच्च शिक्षा के विषय में सरकारें जो नीतियाँ प्रतिपादित कर रही हैं वे भी गांधीजी के ही विचारों का प्रकटीकरण हैं।

मोहनदास करमचन्द गांधी सामान्यतः जिन्हें महात्मा गांधी के नाम से ही जाना जाता है, 20वीं सदी के महानतम् व्यक्तित्वों में से एक माने जाने वाले व्यक्तित्व है। गांधी ने न केवल

---

* वरिष्ठ प्रवक्ता, प्रौढ सतत् शिक्षा एवं विस्तार विभाग, डॉ.बी.आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

भारतीय स्वातन्त्र्य आन्दोलनों को नए आयाम दिए बल्कि विश्व के उन अनेक देशों को, जोकि पश्चिमी देशों के अमानुषिक व्यवहार से प्रताड़ित हो रहे थे, को भी मार्गदर्शन प्रदान किया। इस प्रकार से गांधी 20वीं सदी के प्रारम्भ से अपने जीवन के अन्तिम समय तक साम्राज्यवादी शक्तियों के लिए एक चुनौती के रूप में सक्रिय रहे और अपनी मृत्यु के बाद भी वे अपने विचारों से विश्व के राजनीतिक परिदृश्य को प्रभावित करते रहे।

सही अर्थों में गांधी एक व्यक्ति नहीं अपितु एक विचार थे जोकि आज भी प्रासंगिक हैं और सदैव रहेंगे क्योंकि उनके विचार सनातनी परम्परा का हिस्सा थे।

बाल्यकाल और शिक्षा–दीक्षा

युग–युगों के बाद धरती पर गांधी जैसा व्यक्तित्व उत्पन्न होता है। आधुनिक युग में गांधी को उत्पन्न करने का श्रेय भारत भूमि को प्राप्त है। गांधीजी का जन्म काठियावाड़ के पोरबन्दर नामक स्थान पर 2 अक्तूबर सन् 1869 ईस्वी को एक धार्मिक परिवार में हुआ। इनके पिता का नाम श्री करमचन्द गांधी और माता का नाम श्रीमती पुतली बाई था। इनके पिता पोरबन्दर राज्य के दीवान के पद पर आसीन थे और इनकी समाज में एक अलग ही प्रतिष्ठा थी। गांधीजी का बाल्यकाल सामान्य बालकों की ही भाँति पारिवारिक सदस्यों विशेषकर माँ के मार्गदर्शन में व्यतीत हुआ। इन संस्कारों का प्रभाव इनके ऊपर जीवन पर्यन्त रहा। इन्होंने अपनी मैट्रिक की परीक्षा 1888 में उत्तीर्ण की और वकालत के अध्ययन के लिए ये इंग्लैण्ड गए। इंग्लैण्ड जाते समय इनकी माँ ने इनसे तीन वचन लिए कि– (1) किसी पर–स्त्री के संसर्ग में नहीं आना, (2) शराब नहीं पीना और (3) माँस नहीं खाना। इंग्लैण्ड जाने के पहले इनका विवाह हो चुका था। ये सन् 1891 में अपना अध्ययन समाप्त कर भारत लौटे और वकालत प्रारम्भ कर दी। इंग्लैण्ड की चकाचौंध भरी जिन्दगी देखकर अब इन्होंने भारत के शोषण की दशा देखी तो इनको अजीब सा लगा।

व्यावहारिक जगत एवं सामाजिक जीवन

इसी बीच इनको एक धनाढ्य मुस्लिम व्यापारी का मुकद्दमा लड़ने के लिए दक्षिण अफ्रीका जाने का अवसर प्राप्त हुआ। दक्षिण अफ्रीका में काले–गोरे का व्यापक भेदभाव देखकर इनका हृदय द्रवित हो गया और एक असाधारण सी घटना ने मोहनदास करमचन्द गांधी को महात्मा के मार्ग पर अग्रसर कर दिया। दक्षिण अफ्रीका में अनेक प्रकार के आन्दोलनों का नेतृत्व करने के बाद सन् 1914 में ये भारतीय राजनीतिक पटल पर प्रकट हुए। सन् 1914 से लेकर 1948 तक इन्होंने भारत के स्वातन्त्र्य के लिए अनेक प्रकार के आन्दोलनों का न केवल नेतृत्व किया अपितु इन आन्दोलनों को अपने सिद्धान्तों की कसौटी पर भी कसा। इसी के फलस्वरूप जब उन्होंने सन् 1933 में हरिजनों के सामाजिक उत्थान के लिए यात्रा प्रारम्भ की तो साबरमती आश्रम का विधिवत् विसर्जन कर दिया और यह समस्त सम्पत्ति नवगठित हरिजन सेवक संघ को दान कर दी।

सेवाग्राम, वर्धा की स्थापना, नई तालीम एवं बुनियादी शिक्षा की पृष्ठभूमि

सन् 1934 में उन्होंने वर्धा को अपना केन्द्र बनाया और यहाँ पर सामाजिक और आर्थिक उत्थान के प्रयोग प्रारम्भ किए तथा कांग्रेस की प्राथमिक सदस्यता से भी त्यागपत्र दे दिया। यहाँ से गांधी जी कांग्रेस के मार्गदर्शक की भूमिका में उभरे। इसके बाद कांग्रेस ने भी अपने कार्यक्रमों में परिवर्तन किया। परिणामस्वरूप कांग्रेस ने तीन–चौथाई सदस्य ग्रामवासी एवं एक चौथाई नगर निवासी होंगे ऐसा प्रस्ताव पारित किया।

सन् 1934 के बाद से गांधीजी ने अपनी अब तक की शिक्षा का फल ग्रामोद्योगों को पुनर्जीवित करने के लिए समर्पित कर दिया। फलतः अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ की रचना

की गई। सही मायने में गांधीजी ने स्वदेशी और स्वराज की संकल्पना के सन्दर्भ में एक साकार रूप का प्रकटीकरण किया। अंग्रेज वायसराय को यह सब अत्यन्त ही अरुचिकर लगा। वर्धा में सेवाग्राम (वर्धा से 6 कि.मी. की दूरी पर) की स्थापना के बाद गांधीजी ने अपने शैक्षिक विचारों को अमली जामा पहनाना शुरू किया। इसके लिए गांधीजी ने सन् 1934 में लिखा, "अस्पृश्यता विरोधी आन्दोलन केवल अभी अस्पृश्य माने जाने वाले लोगों की अस्पृश्यता दूर करने हेतु नहीं है। इसका प्रयोजन अधिक व्यापक है, क्योंकि नगर के लोगों के लिए ग्राम निवासी अस्पृश्य हैं। ऐसा इसलिए था क्योंकि गांव शहर की तुलना में आर्थिक रूप से कमजोर थे। गांवों के उद्योग अंग्रेजी राज की कुत्सित नीतियों के चलते बर्बाद हो चुके थे। फलतः गांवों के उद्योगों को पुनर्जीवित करके उनकी दशा में सुधार की महती आवश्यकता थी। यद्यपि कांग्रेस ने अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ की स्थापना की दी थी फिर भी गांधीजी को यह लगता था कि कांग्रेसी उनकी बातों से सहमत नहीं रहते थे। अक्तूबर 1934 में गांधीजी ने भारतीय कांग्रेस की सदस्यता से त्यागपत्र दिया। उस समय उन्हें इस बात का जरा भी सन्देह नहीं था कि भारत राजकीय रूप से अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त होगा। स्वतन्त्रता के लिए कुछ पीढ़ियों तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी ऐसा भी उनको लगता नहीं था। अधिक चिन्ता तो उन्हें इस स्वतन्त्र भारत की वास्तविक स्थिति और रचना कैसी रहेगी इस बात की थी। उन्हें निश्चित रूप से यह लगता था कि, "मेरे प्रति श्रद्धा यदि आड़े नहीं आती है तो अधिकांश अत्यन्त बुद्धिमान कांग्रेसी स्वतन्त्र भारत के लिए जो दिशा निर्धारित करेंगे वह मेरी दिशा से सर्वथा विपरीत होगीं। मैं, यदि उनकी मेरे प्रति जो निष्ठा है उसी पर निर्भर रहूँगा तो उन्हें भारी कष्ट होगा।" उन्होंने स्वीकार किया कि "अधिकांश बुद्धिमान कांग्रेसी मेरे विचार और मेरी पद्धति से बाज आ गए हैं। उनको लगता है कि कांग्रेस के स्वाभाविक विकास में, मैं सहायक नहीं अपितु अवरोधक हूँ।" हाथ कताई गांधीजी को 'देश का दूसरा फेफड़ा' और 'कृषि का अनुचर' लगती थी। परन्तु कांग्रेस के बुद्धिमान लोगों की उसमें सहमति नहीं थी। इतना ही नहीं अस्पृश्यता निवारण, असहयोग, अहिंसा और लोकतन्त्र विषयक संकल्पनाओं में भी उनकी मत भिन्नता थी। इस मतभिन्नता ने भी उन्हें कांग्रेस के सदस्य पद से त्याग–पत्र देने के लिए प्रेरित किया।[7] इस प्रकार गांधीजी को यह भलीभांति समझ में आ गया था कि कांग्रेस किसी भी प्रकार से उनके विचार और उनकी शिक्षा को व्यवहार में लागू न करेगी। इसलिए कांग्रेस की प्राथमिक सदस्यता से विलग होकर उन्होंने सृजनात्मक कार्य में अपने को खपा दिया। इस बीच में जब कांग्रेस को उनकी आवश्यकता महसूस हुई उन्होंने उसका मार्गदर्शन किया। गांधीजी समझ चुके थे कि शिक्षा का स्वावलम्बी मॉडल खड़ा किए बिना भारत की स्वतन्त्रता की रक्षा असंभव है (यदि यह भारत को मिल भी जाती है तो)।

नई तालीम

हमारी बुनियादी शिक्षा पद्धति मस्तिष्क, शरीर और आत्मा तीनों का विकास करती है। साधारण शिक्षा पद्धति केवल मस्तिष्क के विकास पर ही बल देती है। नई तालीम कातने और झाड़ू देने तक ही सीमित नहीं है। ये अति आवश्यक ही क्यों न हो यदि इनसे उक्त तीनों शक्तियों का सामंजस्य–युक्त विकास नहीं होता तो इनका कोई मूल्य नहीं।

गांधीजी नई तालीम को सही अर्थों में मनुष्य के सर्वांगीण विकास का माध्यम मानते थे। जबकि उनके अनुसार अंग्रेजी/आधुनिक शिक्षा से मनुष्य का एकांगी विकास होता है। गांधीजी का मानना था कि अंग्रेजों द्वारा प्रदत्त शिक्षा पद्धति ने भारतीय युवकों को श्रम की महत्ता से विलग कर उसे हेय बना दिया है और कोट–पेन्ट पहिनकर बाबूगिरी को श्रेष्ठत्व प्रदान किया है। गांधीजी लिखते हैं, "अन्य देशों के बारे में कुछ भी सही हो, कम से कम भारत में तो जहाँ अस्सी फीसदी आवादी खेती करने वाली है और दूसरी दस फीसदी उद्योगों में काम करने वाली

है, शिक्षा को निरा साहित्यिक बना देना तथा लड़कों और लड़कियों को उत्तर–जीवन में हाथ के काम के लिए अयोग्य बना देना गुनाह है। मेरी तो राय है कि चूंकि हमारा अधिकांश समय अपनी रोजी कमाने में लगता है इसलिए हमारे बच्चों को बचपन से ही इस प्रकार से परिश्रम का गौरव सिखाना चाहिए। हमारे बालकों की पढ़ाई ऐसी नहीं होनी चाहिए जिससे वे मेहनत का तिरस्कार करने लगें। कोई कारण नहीं कि क्यों एक किसान का बेटा किसी स्कूल में जाने के बाद खेती के मजदूर के रूप में आजकल की तरह निकम्मा बन जाये। यह अफसोस की बात है कि हमारी पाठशालाओं के लड़के शारीरिक श्रम को तिरस्कार की दृष्टि से चाहे न देखते हों, पर नापसन्दगी की नजर से तो जरूर देखते हैं।'' एक तो गांधीजी शिक्षा को लड़के और लड़कियों दोनों के लिए समान भाव से जरूरी मानते हैं। दूसरा, वे यह मानते हैं कि आधुनिक शिक्षा मात्र बातों तक ही सीमित है व्यवहार में यह कुछ भी करने में असमर्थ है तथा श्रम और श्रमिकों को हेय बनाने में इसका महत्त्वपूर्ण योगदान है। परिणामस्वरूप यह समाज में विघटन को और अधिक बढ़ावा देगी न कि इस खाई को पाटने में सहयोग करेगी। इसलिए उनका मानना था कि शिक्षा का विकास इस प्रकार से किया जाए जिससे श्रम के प्रति लगाव बढ़े और व्यावहारिक समझ विकसित हो। गांधीजी लिखते हैं कि, ''यदि बुनियादी शिक्षा के विद्यालयों ने विद्यार्थियों के प्रति अच्छी तरह अपने कर्त्तव्य का पालन किया है तो चौदह वर्ष के विद्यार्थी सच्चे शुद्ध हृदय वाले और स्वस्थ होंगे। उनका रुझान गांवों की ओर होगा। उनके मस्तिष्क और हाथ का विकास एक–सा हुआ होगा। उनमें छल–कपट, धोखा या फरेब देने की भावना न होगी। उनकी बुद्धि तेज होगी, पर वे पैसा कमाने के झंझट में न पड़ेंगे। जो भी नेक और ईमानदारी का काम उन्हें मिलेगा उसे वे अच्छी तरह कर सकेंगे। चूंकि अपने विद्यालयों में उन्होंने सेवा और सहयोग का पाठ पढ़ा है, इसलिए अपने आस–पास के लोगों में वे उन्हीं गुणों के प्रचार का विकास करेंगे। वे न तो भिखमंगे बनेंगे और न ही दूसरों के भरोसे जीना पसन्द करेंगे।'' इस प्रकार गांधीजी का स्पष्ट अभिमत था कि नई तालीम में प्रशिक्षित विद्यार्थी न केवल गांवों के प्रति आकर्षित होंगे अपितु वे समाज के प्रति भी संवेदनशीलता का परिचय देंगे तथा शुद्ध हृदय के स्वामी होकर वे समाज में भी सौहार्द का वातावरण निर्मित करेंगे। इस प्रकार के युवकों से ही समाज का सकारात्मक सृजन संभव है तथा गांवों के विकास के आधार पर ही देश का भी सार्थक विकास हो सकेगा।

गांधीजी ने नई तालीम को मात्र बातों तक ही सीमित नहीं रखा बल्कि इसको ठोस स्वरूप प्रदान करते हुए इसके सिद्धान्तों का भी विकास किया। गांधीजी के ही शब्दों में, ''हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि यह बुनियादी तालीम देश के वातावरण में से पैदा हुई है और देश की आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है। यह वातावरण भारत के सात लाख गांवों में और उनमें रहने वाले करोड़ों लागों में छाया हुआ है। अपने को भुलाकर आप भारत को भी भूल जायेंगे। सच्चा भारत नगरों में नहीं बल्कि इन सात लाख गांवों में बसता है। यहाँ हम बुनियादी तालीम के सिद्धान्तों पर विचार करेंगे। जिसके मुख्य बिन्दु निम्नवत् हैं :

- पूरी शिक्षा स्वावलम्बी होनी चाहिए यानि अन्त में पूंजी को छोड़कर अपना सारा कर्ज उसे स्वयं ही निकालना चाहिए।
- उसमें आखिरी दर्जे तक हाथ का पूरा–पूरा उपयोग किया जाए यानि विद्यार्थी अपने हाथों से कोई न कोई उद्योग धन्धा आखिरी दर्जे तक करे।
- सारी तालीम विद्यार्थी की प्रान्तीय भाषा के माध्यम से ही दी जानी चाहिए।
- इसमें साम्प्रदायिक धार्मिक शिक्षा के लिए कोई जगह नहीं होगी लेकिन बुनियादी नैतिक तालीम के लिए काफी गुंजाइश होगी।

यह तालीम फिर इसे बच्चे लें या बड़े, स्त्रियाँ लें या पुरुष, विद्यार्थियों के घरों में पहुंचेगी। चूंकि इस तालीम को पाने वाले लाखों–करोड़ों विद्यार्थी अपने–आपको सारे भारत के नागरिक समझेंगे, इसलिए उन्हें अन्तः प्रान्तीय भाषा सीखनी होगी। सारे देश की यह एक भाषा नागरी या उर्दू में लिखी जाने वाली हिन्दुस्तानी ही हो सकती है। इसलिए विद्यार्थियों को दोनों लिपियाँ अच्छी तरह सीखनी होंगी। गांधीजी बुनियादी शिक्षा/नई तालीम को देशी शिक्षा पद्धति ही मानते हैं जो कि अंग्रेजी राज के चलते प्रचलन से बाहर कर दी गई थी और युवकों का रुझान ग्रामोद्योग तथा कृषि से हटकर नौकरियों की ओर आकर्षित हो गया। अतः इसके चलते पुनः युवक अपने गांव और ग्रामोद्योगों की ओर आकर्षित होकर स्वावलम्बी हो सकेंगे। साथ ही इसमें पूंजी के स्थान पर श्रम की महत्ता का प्रतिपादन किया गया है। परिणामस्वरूप श्रम के आधार पर युवकों को अपने परिश्रम का प्रतिफल अधिक मिलेगा। किसी भी प्रकार की निर्भरता समाप्त हो जाएगी। इन सब बातों के अतिरिक्त साम्प्रदायिक सौहार्द तथा भाषायी झंझटों से भी यह मुक्ति सुनिश्चित करती है।

नई तालीम युवकों में एक प्रकार कर नवउत्साह भी भर सकने में समर्थ होगी। इसमें किसी भी प्रकार से किसी भी युवक के ऊपर कोई दबाव नहीं होगा। बल्कि वह स्वेच्छा से ही आनन्द लेकर कार्य को अंजाम देगा। हाथ का काम इस सारी योजना का केन्द्र बिन्दु होगा। ..... हाथ की तालीम का मतलब यह नहीं होगा कि विद्यार्थी पाठशाला के संग्रहालय में रखने लायक वस्तु बनाए या ऐसे खिलौने बनाए जिनका कोई मूल्य नहीं। उन्हें ऐसी वस्तुएँ बनाना चाहिए, जो बाजार में बेची जा सकें। कारखानों में प्रारम्भिक काल में जिस तरह बच्चे मार के भय से काम करते थे, उस तरह हमारे बच्चे यह काम नहीं करेंगे। वे उसे इसलिए करेंगे कि इससे उन्हें आनन्द मिलता है और उनकी बुद्धि को स्फूर्ति मिलती है। यानि नई तालीम का पाठ बालक दबाव में नहीं अपितु आनन्द में सीखकर उससे अपने और समाज के जीवन में आनन्द बिखरेंगे।

वास्तव में गांधीजी की संकल्पना में भारत के गांव और भारत की युवा पीढ़ी के विकास का मुद्दा ही प्रमुख था। वे नहीं चाहते थे कि आधुनिक शिक्षा जिसका कि आधार अंग्रेजी सोच पर आधारित था, के द्वारा भारत में बरबादी और बेरोजगारों की फौज खड़ी हो। इसलिए वे चाहते थे कि शिक्षा वह हो जो न केवल युवकों को आत्मनिर्भर बनाए बल्कि अपने पैरों पर भी खड़ा होना सिखाए। इस सम्बन्ध में गांधीजी का स्पष्ट अभिमत था कि, "मैं भारत के लिए निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के सिद्धान्त को दृढ़तापूर्वक मानता हूँ। मैं यह भी मानता हूँ कि इस लक्ष्य को पाने का सिर्फ यही एक रास्ता है कि हम बच्चों को कोई उपयोगी उद्योग सिखाएँ और उसके द्वारा उनकी शारीरिक, मानसिक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का विकास सिद्ध करें। ऐसा किया जाए तो हमारे गांवों के लगातार बढ़ रहे नाश की प्रक्रिया कम होगी और ऐसी न्यायपूर्ण समाज व्यवस्था की नींव पड़ेगी, जिसमें अमीरों और गरीबों के अस्वाभाविक विभेद की गुंजाइश नहीं होगी और हर एक को जीवन–मजदूरी और स्वतन्त्रता के अधिकारों का आश्वासन दिया जा सकेगा।" यानि नई तालीम न केवल गांवों के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करेगी बल्कि वह अमीर–गरीब, गांव–शहर के मध्य विभेद भी समाप्त करेगी। सही मायने में यह शिक्षा की प्रयोगात्मक पद्धति युवकों में उत्साह का संचार करेगी। गांधीजी आगे भी लिखते हैं कि, "इस तालीम की मंशा यह है कि गांव के बच्चों को सुधार–संवारकर उन्हें गांव का आदर्श बाशिंदा बनाया जाए। इसकी योजना खासकर उन्हीं को ध्यान में रखकर तैयार की गई है। इस योजना की असल प्रेरणा भी गांवों से ही मिली है। जो कांग्रेसजन स्वराज्य की इमारत को बिल्कुल उसकी नींव या बुनियाद से चुनना चाहते हैं, वे देश के बच्चों की उपेक्षा कर ही नहीं सकते। परदेशी हुकुमत चलाने वालों ने अनजाने मे ही क्यों न हो, शिक्षा के क्षेत्र में अपने काम

की शुरूआत बिना चूके बिल्कुल छोटे बच्चों से की है। हमारे यहाँ जिसे प्राथमिक शिक्षा कहा जाता है वह जो एक मजाक है, उसमें गावों में बसने वाले हिन्दुस्तान की जरूरतों और मांगों का जरा भी विचार नहीं किया गया है, और वैसे देखा जाए तो उसमें शहरों का भी कोई विचार नहीं हुआ है। बुनियादी तालीम हिन्दुस्तान के तमाम बच्चों को, फिर वे गांवों के रहने वाले हों या शहरों के, हिन्दुस्तान के सभी श्रेष्ठ और स्थायी तत्त्वों को साथ जोड़ देती है। यह तालीम बालक के मन और शरीर दोनों का विकास करती है; बालक को अपने वतन के साथ जोड़े रखती है, उसे अपने और देश के भविष्य का गौरवपूर्ण चित्र दिखाती है, और उस चित्र में देखे हुए भविष्य के हिन्दुस्तान का निर्माण करने में बालक या बालिकाएँ अपने स्कूल जाने के दिन से ही हाथ बंटाने लगें, इसका इन्तजाम करती है।" गांधीजी की एक पीड़ा यह भी थी कि आधुनिक शिक्षा जोकि मैकाले प्रणीत थी, में भारत और भारतीयों के विषय में बहुत ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया था। उसमें मात्र इतना ही ध्यान दिया गया था कि किस प्रकार से ब्रिटिश सरकार का हित साधन हो और स्वदेशी समाज में अंग्रेजी सोच के मनुष्य विकसित हों। साथ ही स्वदेश और स्वदेशी का हित साधन करने वाली पूरी प्रणाली ध्वस्त हो। इसलिए गांधीजी चाहते थे कि नई तालीम या बुनियादी शिक्षा के माध्यम से भारतीय संस्कृति, आर्थिक एवं सामाजिक धरोहरों का संरक्षण किया जा सके, जिससे भारत अपनी समस्याओं से स्वयं भी निजात पाने की अवस्था में आ जावे। इस सन्दर्भ में गांधीजी लिखते हैं कि, "हमारे जैसे गरीब देश में हाथ की तालीम जारी करने से दो हेतु सिद्ध होंगे। उससे हमारे बालकों की शिक्षा का खर्च निकल आएगा और वे ऐसा धंधा सीख लेंगे जिसका अगर वे चाहें तो उत्तर–जीवन में अपनी जीविका के लिए सहारा ले सकते हैं। इस पद्धति से हमारे बालक आत्म–निर्भर अवश्य हो जायेंगे। राष्ट्र को कोई चीज इतना कमजोर नहीं बनाएगी जितना यह बात कि हम श्रम का तिरस्कार करना सीखें।

उच्च शिक्षा

गांधीजी ने न केवल नई तालीम को युवकों की आवश्यकता समझा बल्कि उच्च शिक्षा के महत्त्व को भी स्वीकारा। वे स्वयं भी आधुनिक उच्च शिक्षित थे। इसलिए उनको लगता था कि व्यक्ति को न केवल उच्च शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए बल्कि उच्च शिक्षा की प्राप्ति के बाद अपने सामाजिक दायित्वों का भी निर्वहन करना चाहिए। सामाजिक दायित्वों के निर्वहन में वे बड़े आर्थिक घरानों की भूमिका भी निश्चित किए जाने के पक्षधर थे। उच्च शिक्षा और सामाजिक दायित्व के सन्दर्भ में उन्होंने लिखा है कि, "मैं कॉलेज की शिक्षा में काया–पलट करके उसे राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल बनाऊंगा। यन्त्र–विद्या के तथा अन्य इंजीनियरों के लिए डिग्रियाँ होंगी। वे भिन्न–भिन्न उद्योगों के साथ जोड़ दिये जाएंगे और उन उद्योगों को जिन स्नातकों की जरूरत होगी उनके प्रशिक्षण का खर्च वे उद्योग ही देंगे। इस प्रकार टाटा वालों से आशा की जाएगी कि वे राज्य की देखरेख में इंजीनियरों को तालीम देने के लिए एक कॉलेज चलाएँ। इसी तरह मिलों के संघ भी अपनी जरूरतों के स्नातकों को तालीम देने के लिए अपना कॉलेज चलाएंगे।"

इसी तरह और उद्योगों के नाम लिए जा सकते हैं। वाणिज्य व्यवसाय वालों का अपना कॉलेज होगा। अब रह जाते हैं कला, औषधि और खेती। डॉक्टरी के कॉलेज प्रामाणिक अस्पतालों के साथ जोड़ दिए जाएंगे। चूंकि ये धनवानों में लोकप्रिय हैं, इसलिए उनसे आशा रखी जाती है कि वे स्वेच्छा से दान देकर डाक्टरी के कॉलेजों को चलाएंगे और कृषि–कॉलेज जो अपने नाम को सार्थक करने के लिए स्वावलम्बी होने ही चाहिए। मुझे कुछ कृषि स्नातकों का दुखद अनुभव है। उनका ज्ञान ऊपरी होता है। उनमें व्यावहारिक अनुभव की कमी होती है

परन्तु यदि वे देश की जरूरतों को पूरी करने वाले और स्वावलम्बी खेतों पर तालीम लें, तो उन्हें अपनी डिग्रियाँ लेने के बाद और अपने मालिकों के खर्च पर तर्जुबा हासिल नहीं करना पड़ेगा।

गांधीजी भी शिक्षा को समाज का ही दायित्व समझते थे, जैसा कि राजनीति शास्त्र के आचार्य विष्णु गुप्त (कौटिल्य) मानते थे। भारत में वैसे भी शिक्षा समाज का ही दायित्व रहा है। ब्रिटिश सरकार ने अपने प्रकार की शिक्षा पद्धति लागू करने के लिए सरकार आधारित शिक्षण संस्थाओं की स्थापना की। परिणामस्वरूप शिक्षा सरकार के खाते में चली गई। लेकिन 20वीं सदी के प्रारम्भ में सन् 1905–06 से पुनः देश में राष्ट्रीय विद्यालयों की स्थापना प्रारम्भ हुई। इस प्रकार से गांधीजी एक ओर तो ग्रामोद्योगों एवं प्राथमिक शिक्षा के सन्दर्भ में नई तालीम के विकास पर जोर देते हैं जिससे गांवों का स्वाभिमान सुरक्षित रह सके। साथ ही उच्च आधुनिक शिक्षा के प्रचार–प्रसार में सरकार और समाज की भूमिका भी स्पष्ट करते हैं जिससे भारत सम्पूर्ण विश्व के साथ कदम से कदम मिलाकर चल सके। उनका स्पष्ट मत है कि उच्च शिक्षा में संरक्षक की भूमिका सरकार निभाए एवं अन्य दायित्व समाज के लब्ध प्रतिष्ठित उद्योगपति निर्वहन करें। 21वीं सदी में भारत सरकार भी अब इसी प्रकार की शिक्षा नीति का विकास करने पर बल दे रही है जिसमें सरकार एवं समाज की भूमिका सुनिश्चित की जा सके।

प्रासंगिकता एवं महत्व

सन् 1986 के बाद से विश्व में एक नई पहल प्रारम्भ होनी शुरू हुई। इस पहल ने न केवल विश्व राजनीति को एक ध्रुवीय बना दिया अपितु विश्व के मानचित्र को भी परिवर्तित करके रख दिया। सन् 1991 में भारत ने भी विश्व प्रदत्त नई अर्थ व्यवस्था को स्वीकारा। वैश्विक स्तर पर इस नई व्यवस्था के अनेक दुष्परिणामों से विश्व परिचित है। भारत अपनी मजबूत परम्पराओं के चलते इन परिस्थितियों से सुरक्षित निकल पाने में सफल रहा किन्तु विश्व के अनेक देश इससे अपने को सुरक्षित नहीं रख सके। परिणामस्वरूप आज वे विश्व के मानचित्र पर नहीं हैं। भारत आज भी अपनी दमदार उपस्थिति न केवल दर्ज करा रहा है अपितु उत्तरोत्तर विकास के सोपान भी चढ़ रहा है। उसके पीछे गांधीजी जैसे अनेक महापुरुषों के राष्ट्रीय चिन्तन का प्रवाह है। गांधीजी ने अपने शिक्षा सम्बन्धी विचारों की जो रूपरेखा आज से लगभग 100 वर्ष पूर्व (हिन्द स्वराज 1906) तथा समय–समय पर लिखे गए अपने अनेक लेखों में की है उसका प्रकटीकरण आज 21वीं सदी में देखने को मिल रहा है। प्राथमिक शिक्षा में पंचायतों का सहभाग एवं उच्च शिक्षा में पब्लिक–प्राइवेट पार्टनरशिप का विचार बल पकड़ रहा है। उच्च तकनीकी शिक्षा, स्वास्थ्य शिक्षा एवं कृषि शिक्षा में अनेकानेक प्रमुख घराने पदार्पण कर रहे हैं। सम्पूर्ण भारत में लगभग 12,000 शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थानों की मौजूदगी एवं लगभग 8,000 के आस–पास तकनीकी संस्थानों की उपस्थिति ने आज गांधीजी के स्वप्न को साकार किया है। चिकित्सा के क्षेत्र में भी बड़े–समूहों ने दखल देना प्रारम्भ कर दिया है। इस प्रकार से नई तालीम से लेकर उच्च शिक्षा के मापदण्डों तक की स्थापना में सरकार और समाज का हस्तक्षेप सर्वत्र परिलक्षित होता दिख रहा है।

यद्यपि भौतिकवाद एवं वैश्वीकरण के दुष्प्रभाव से शिक्षा जैसा पवित्र क्षेत्र भी अपने को सुरक्षित रख पाने में असमर्थ महसूस कर रहा है। इस क्षेत्र में धनलोलुपों के पदार्पण से शिक्षा का विद्रूप रूप ही सामने प्रकट हो रहा है किन्तु सरकार द्वारा स्थापित मापदण्डों एवं कसौटियों के पालन के सन्दर्भ में स्थापित विधिक निकायों की भूमिका इसको दुरुस्त करने में लगी हुई है। आज भारत की आर्थिक स्थितियों पर भी इसका प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। विश्व के अनेक देशों को तकनीकी विशेषज्ञों की आपूर्ति में भारत ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निर्वहन की है। इस प्रकार से गांधीजी का स्वप्न आज 21वीं सदी में फलीभूत होता प्रतीत होता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

- अग्रवाल, आर. सी., भारत का स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं संवैधानिक विकास, नई दिल्ली.
- धर्मपाल,(2007): गांधी को समझें, पुनरुत्थान न्यास, अहमदाबाद, पृ.–20.21
- धर्मपाल,(2007): गांधी को समझें, पुनरुत्थान धाम, अहमदाबाद, पृ.–20.21
- धर्मपाल,(2007): गांधी को समझें, पुनरुत्थान न्यास, अहमदाबाद, पृ.–22
- धर्मपाल,(2007): गांधी को समझें, पुनरुत्थान न्यास, अहमदाबाद, पृ.–22
- महात्मा,(1947): खण्ड–7, पृ.–449, 234, पटना.
- तेन्दुलकर, डी. जी.(1952): महात्मा, खण्ड–39, पृ.–371
- तेन्दुलकर, डी. जी.(1952): महात्मा, खण्ड–4, पृ.–2
- यंग इण्डिया,(1921) गांधी की नई तालीम पृ.–19
- सेवाग्राम–21.8.1946, हरिजन–22.9.1946, हरिजन सेवक–22.9.1946 तथा शिक्षण और संस्कृति, पृ.–444
- हरिजन सेवक–2.11.1947, पृ.–332–33, शिक्षण और संस्कृति, पृ.–447–48
- हरिजन–11.1.1937
- हरिजन–11.1.1937
- रचनात्मक कार्यक्रम, पृ.–28–29
- यंग इण्डिया, 1.9.1971
- हरिजन, 31.7.1937
- कौटिल्य–अर्थशास्त्र, चौखम्बा प्रकाशन. वाराणसी
- धर्मपाल (2000) द ब्यूटीफुल ट्री, अदर इण्डिया पब्लिकेशन।